उपसंहार

सुधा अरोड़ा की कहानियों को अगर गहराई में जाकर देखा जाए तो पूरी कहानी में स्त्री-पुरुष को विविध प्रकार से समाज में संघर्ष करना पड़ता है। सुधा अरोड़ा का कथा साहित्य जितना विस्तृत है उतना ही विस्तृत आयाम उनके व्यक्तिगत जीवन का भी है । उनके साहित्य और वैचारिक धरातल से गुजरते हुए लगातार यह अनुभव किया जा सकता है कि आज भी इनको पढ़ना और समझना अत्यंत कठिन कार्य है, केवल औपचारिकता को पूर्ण करने के लिए अंतिम निष्कर्ष दे देना सार्थक रूप से सही नहीं माना जा सकता । सुधा अरोड़ा समकालीन दौर की महत्वपूर्ण कथाकार रहीं हैं। समकालीन दौर की कहानियाँ मानसिक अंतर्द्वंद को लेकर रची गई हैं, जिससे सुधा अरोड़ा भी स्वयं को नहीं अलग कर पाई हैं। समकालीन महिला कथाकारों ने स्त्री को विशेष मुद्दा बनाकर कहानी लिखी हैं। साठोत्तरी महिला कथाकार सुधा अरोड़ा की लगभग सभी कहानियाँ स्त्री विमर्श के ही रूप में लिखी गई हैं।

सुधा अरोड़ा महानगरों से जुड़ी हुई मध्यवर्गी महिला लेखिका हैं । इस कारण अधिकांशतः इनके कहानियों में मध्यवर्गी स्त्रियों की समस्या का वर्णन मिलता है । इनकी कहानियों में हर स्तर की स्त्रियों की समस्या का उल्लेख मिलता है एवं उनके अस्मिता और अस्तित्व को भी रेखांकित किया गया है । सुधा अरोड़ा ने महानगरों में रहने वाली घरेलू कामकाजी एवं निम्न मध्यवर्गी महिलाओं को संघर्ष करते हुए देख कर, अपने कहानियों में बड़ी ही सहजता के साथ लिपिबद्ध किया है। सुधा अरोड़ा सामाजिक परिदृश्य में स्त्रियों का जो चित्रण करती हैं, वह उनके देखे गए यथार्थ का ही प्रतिफल है। इनके कहानियों में खुद के द्वारा किया हुआ संघर्ष भी दिखाई पड़ता है। इनके कहानियों में अत्याचार, शोषण, हिंसा, शिशु भ्रूण-हत्या, दहेज़, लैंगिक भेद-भाव के खिलाफ संघर्ष करती स्त्रियों का चित्रण किया गया है । वह अधिकांशतः महानगरीय स्त्री मन के कोने में दबी हुई पीड़ा को देखने और अनुभव को अपनी

कहानियों में उभारने का प्रयास करती हैं। सुधा अरोड़ा सचमुच समाज में हो रहे महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार को अपनी कहानियों में शब्दों के माध्यम से उनकी द्वंद्वात्मक स्थिति का सही-सही आकलन करती हैं। वे स्त्रियों की उसकी अस्मिता की पहचान और स्वीकृति के लिए शब्दों के माध्यम से संघर्ष करती हैं और इस सम्बन्ध में वह सती की शक्ति को रेखांकित करती हैं। साथ ही साथ अपनी कहानियों में उन स्त्रियों की सहज कमजोरिओं को सामने रख कर उनके लिए बचाव भी करती हैं। सुधा अरोड़ा समाज में स्त्रियों के दोहरे मानदंड को उजागर कर उस पर प्रहार भी करती हैं। इनका स्त्रीवादी दृष्टिकोण घर -परिवार, एवं समाज के मान्यताओं के बीच निर्मित हुआ है। सुधा अरोड़ा संघर्ष एवं समस्याओं से जूझती हुई स्त्रियों को अपना केन्द्रीय विषय बनाया है, जिसमें निम्न, मध्य और उच्च वर्ग की स्त्रियाँ अलग-अलग हिंसा की शिकार हुई दिखाई देती हैं। सुधा अरोड़ा की स्त्रियाँ, समाज या पितृसत्ता द्वारा किए जा रहे शोषण एवं हिंसा से हार नहीं मानती हैं। उनकी कहानियों में स्त्री जिम्मेदार पात्र के रूप में दिखाई पड़ती हैं और अपने कार्य के प्रति कर्तव्य निष्ठ रहती हैं। सुधा जी की कहानियों में शारीरिक या मानसिक दोनों ही रूपों में स्त्रियों को सताया जाता है। पितृसत्ता की हिंसा अलग-अलग रूपों में स्त्रियों पर प्रहार करती हुई दिखाई देती है। संभ्रांत परिवार की स्त्रियों को मानसिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है और गरीब व निर्धन परिवार में स्त्रियों को शारीरिक रूप से हिंसा का शिकार होना पड़ता है।

सुधा अरोड़ा की कहानियाँ समाज को एक नई दृष्टि प्रदान करती हैं। समाज में पनप रही बुराइयों को यथार्थ रूप से सबको अवगत कराती हैं इनकी कहानी। इन्होंने इस तरीके से समस्त पहलुओं लेकर लेखन कार्य किया है, जिसके कारण समाज इन्हें कुदृष्टि एवं घृणा की नजर से देखता है।

सुधा अरोड़ा की कहानियों में पारंपरिक संस्कारों एवं रूढ़ियों में जकड़ी स्त्री का भी उल्लेख किया गया है जो उन संस्कारों को लेकर पितृवर्चस्व के प्रति आवाज नहीं उठा पाते हैं। सुधा जी की कहानियों का मतलब है कि स्त्री उन सभी मानदंडों को भुलाकर अपने भी अस्तित्व

एवं अस्मिता की पहचान के बारे में सोचें, वे भी समाज में अपने अधिकार के साथ जीवन व्यतीत करें। आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में भी काफी बदलाव देखने को मिलता है। इनकी स्त्रियाँ आर्थिक स्थिति से मजबूत हैं, फिर भी उनमें कुछ ज्यादा बदलाव नहीं आ पाया है। लेकिन इतना जरूर जागरूकता आई है कि आर्थिक रूप से संपन्न हुई हैं। शिक्षा के क्षेत्र में भी काफी महिलाएँ आगे निकल चुकी हैं। वह अपने जीवन के बारे में सही और गलत का फैसला ले सकती हैं। आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होने से महिलाएँ पितृसत्ता के बुने हुए जाल से बाहर निकलने का प्रयास कर रही हैं।

सुधा अरोड़ा ने अपनी कहानियों में भौतिक जरूरतों को पूरा करने के लिए पुरुष और स्त्री के बीच तनाव होने से बच्चों के मानसिक स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ता है ? आज का भौतिक वादी समाज बच्चों का बचपना भी छीन ले रहा है। आर्थिक समस्या के होने से स्त्री, अपने बच्चों को बचपन से ही अलग कर, मजदूरी या अन्य क्षेत्रों में काम करने के लिए घर से दूर निकल जाती हैं। इसका असर बच्चों पर पड़ता है, क्योंकि बचपन में बच्चों की परवरिश ठीक ढंग से नहीं हो पाती है। वह बच्चों को अपनी माँ से नहीं मिल पाता और वही बच्चे जब बड़े होते हैं तो वे अपने माता-पिता के खिलाफ हो जाते हैं तो आद्यौगिकीकरण भी स्त्रियों की समस्या को काफी बढ़ाया है। इन सबके पीछे सिर्फ अर्थ की समस्या है और उसे पुरुष द्वारा ही पूरा किया जा सकता है, जिससे महिलाएँ पुरुषों पर ही पूर्ण रूप से आश्रित रहती हैं। पुरुष उसी का फायदा उठाकर उन पर राज एवं वर्चस्व कायम कर लेता है। सुधा अरोड़ा इन सबसे हटकर स्त्रियों को आत्मनिर्भर बनाने पर ज्यादा बल देती हैं। यदि पितृसत्ता को कम करना है तो महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना जरूरी है और आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षित होना जरूरी है। शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जो स्त्रियों को आत्मनिर्भर बना सकता है, उनका शोषण होने से बचा सकता है।

सुधा अरोड़ा अपनी कहानियों में समसामयिक यथार्थ को अस्पष्ट रूप से प्रस्तुत करती हैं। पितृसत्तात्मक समाज का बंधन व मान्यताएँ इतना जटिल हैं कि स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास की

इच्छा रखने वाली स्त्रियाँ भी अंत में हारकर पितृसत्तात्मक समाज का ही आश्रय ग्रहण कर लेती हैं । उनकी यही भावना ही उनके दु:खी जीवन का कारण बन जाती है । इन सबके लिए सुधा अरोड़ा जैसी लेखिका को उन समस्याओं का कारण नहीं मान सकते हैं । इन्होंने तो अपने कहानियों में उन्हीं सब समस्याओं को उकेरा है जो इनके आस-पास या खुद के जीवन से जुड़े हुए यथार्थ रूप में दिखाई पड़ा है । संपूर्ण समस्या का कारण तो वर्षों से चली आ रही पितृसत्तात्मक समाज की व्यवस्था का है । इसके बाद भी सुधा अरोड़ा ने उन जटिल सत्ता संरचना का प्रतिरोध अपनी कहानियों में किया हैं।